इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 1

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

मुख्य न्यायमूर्ति वी.एम. जैन और न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल के समक्ष

याचिकाकर्ता - इंद्रपाल सिंह

बनाम

प्रतिवादी - भारत संघ और अन्य

1997 का सीआरएल डब्ल्यू.पी संख्या 465

17 जनवरी, 2003

सेना अधिनियम, 1950 - धारा 63 और 164 (2) - सेना नियम, 1954 - 18 (3) - अग्रिम शाखा को संभालने में अनुशासनहीनता और लापरवाही के आरोप - संक्षेप कोर्ट मार्शल सेवा से बर्खास्तगी का आदेश देना - सेना के उप प्रमुख बर्खास्तगी आदेश की तारीख से बर्खास्तगी के आदेशों को सेवा से निर्वहन में परिवर्तित करना प्रभावी हो गया - समरी कोर्ट मार्शल के आदेशों के खिलाफ धारा 164 (2) के तहत दायर याचिका सुनवाई योग्य है - सक्षम प्राधिकारी बर्खास्तगी की सज़ा को कम कर सकता है। उप सेना प्रमुख द्वारा पारित आदेश में कोई खामी या अवैधता नहीं

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 2

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

है - नियम 18 (3) के प्रावधान यह प्रतिबंध लगाते हैं कि निर्वहन पूर्वव्यापी प्रभाव से नहीं किया जा सकता है - उस सीमा तक आदेश रद्द किया जा सकता है - याचिका को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है।

माना जाता है कि याचिकाकर्ता की राइफल से गोली निकलने के कारण एक व्यक्ति घायल हो गया था। याचिकाकर्ता ने अधिकारियों के समक्ष अपना अपराध भी स्वीकार कर लिया। उनके खिलाफ संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही शुरु की गई और उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। यद्यपि कोर्ट मार्शल की कार्यवाही संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक समीक्षा के अधीन है, फिर भी कोर्ट मार्शल संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन नहीं है। यदि कोर्ट मार्शल उचित ढंग से आयोजित किया गया है और इसकी संरचना को कोई चुनौती नहीं दी गई है और कार्यवाही निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार है, तो उच्च न्यायालय अपराधी को दी गई सज़ा में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

(अनुच्छेद 12)

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 3

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

आगे कहा गया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप अच्छी व्यवस्था के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण चूक और सैन्य अनुशासनहीनता का कार्य है, जिसमें उन्होंने अपनी सर्विस राइफल को इतनी लापरवाही से संभाला कि इसे छुट्टी दे दी गई और इस तरह उनके सह-साथी को घायल कर दिया गया। इसलिए, किसी भी तरह से, चार्जशीट में याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को संहिता के तहत परिभाषित और दंडनीय नागरिक अपराध नहीं माना जा सकता है। इसलिए, अधिनियम की धारा 69 के तहत याचिकाकर्ता पर मुकद्दमा चलाने का सवाल ही नहीं उठता और उस पर अधिनियम की धारा 63 के तहत सही मुकद्दमा चलाया गया। यदि ऐसा है, तो अधिनियम की धारा 120 की उपधारा (2) द्वारा लगाई गई रोक लागू नहीं होती है। इसलिए, इस तर्क में कोई बल नहीं है कि वर्तमान मामले में की गई संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर थी।

(अनुच्छेद 14)

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 4

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

आगे कहा गया कि यद्यपि अधिनियम की धारा 71 के तहत प्रदान की जाने वाली संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही में दी जा सकने वाली सज़ाओं की सूची में आरोपमुक्त करने की सज़ा का उल्लेख नहीं है, लेकिन उक्त सज़ा केंद्र सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत पोस्ट पुष्टिकरण याचिका का निपटारा करते समय दी जा सकती है क्योंकि इस धारा के तहत 'कोई भी आदेश' पारित किया जा सकता है, ऐसा प्राधिकार जो वह उचित समझता हो ।

(अनुच्छेद 16)

आगे कहा गया कि संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दिए गए निष्कर्षों और सज़ा के खिलाफ, एक पीड़ित व्यक्ति द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत एक याचिका सुनवाई योग्य है और इस पर विचार किया जा सकता है और निर्धारित प्राधिकारी द्वारा ऐसा आदेश पारित करके निर्णय लिया जा सकता है जो वह उचित समझता है। इस तरह के आदेश पारित करते समय, संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा को किसी अन्य सज़ा तक कम और कम किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 164 (2) के

तहत सक्षम प्राधिकारी बर्खास्तगी की सज़ा को सेवा से निर्वहन तक कम सज़ा तक कम कर सकता है। इस प्रकार, थल सेनाध्यक्ष द्वारा 2 मार्च 1995 को पारित आदेश में कोई दुर्बलता या अवैधता नहीं है।

(अनुच्छेद 20)

इसके अलावा, 1954 के नियमों के नियम 18 के उप-नियम (3) में स्पष्ट रूप से एक प्रतिबंध लगाया गया है कि किसी भी मामले में पूर्वव्यापी प्रभाव से निर्वहन नहीं किया जा सकता है। हमारी राय है कि चाहे आरोपमुक्त सामान्य प्रक्रिया में किया गया हो या सज़ा के रूप में किया गया हो, किसी भी मामले में, इसे पूर्वव्यापी प्रभाव से नहीं किया जा सकता है। केवल इसलिए कि याचिकाकर्ता को कोर्ट मार्शल द्वारा दंडित किया गया था, यह नहीं कहा जा सकता है कि उपरोक्त नियम उस पर लागू नहीं होते हैं और उसे पूर्वव्यापी प्रभाव से निर्वहन की सज़ा दी जा सकती है। इसलिए, इस हद तक, 2 मार्च, 1995 के उस आदेश को निरस्त किया जाता है जिसके तहत याचिकाकर्ता को उसकी बर्खास्तगी के आदेश के प्रभावी होने की तारीख से सेवा से मुक्त माना गया था

और याचिकाकर्ता को आरोपमुक्त करने का आदेश उस तारीख से प्रभावी होगा जब इसे उप सेना प्रमुख द्वारा पारित किया गया था।

(अनुच्छेद 24)

आर.एस रंधावा - याचिकाकर्ता के वकील

आर. एस. राय - भारत संघ के लिए केंद्र सरकार के वरिष्ठ स्थायी वकील।

निर्णय

न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल

(1) इंद्रपाल सिंह - याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत उनके खिलाफ 13 जुलाई, 1992 (अनुबंध पी -2) की संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही को रद्द करने के लिए वर्तमान याचिका दायर की है, जिसमें उन्हें सेवा से बर्खास्त करने की सज़ा सुनाई गई थी और आगे 2 मार्च, 1995 के आदेश को

रद्द करने के लिए (अनुबंध पी -4), उप सेना प्रमुख द्वारा पारित, जिसके तहत कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई बर्खास्तगी की सजा को आरोप में बदल दिया गया था, जो सेना अधिनियम, 1950 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) और सेना नियम, 1954 (इसके बाद नियम के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों के तहत कानूनी रूप से नहीं किया जा सकता था और यह अवैध और अधिकार क्षेत्र के बिना था; एक और प्रार्थना के साथ कि उन्हें सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में बहाल किया जाए, प्रारंभ में, इस याचिका को 1995 के सीडब्ल्यूपी नंबर 7793 के रूप में क्रमांकित किया गया था, लेकिन बाद में इसे 21 मार्च, 1997 के तहत आपराधिक रिट याचिका के रूप में माना गया और 1997 के सीआरएल डब्ल्यूपी नंबर 465 के रूप में क्रमांकित किया गया।

(2) मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को अप्रैल, 1980 में सिपाही के रूप में सेना में भर्ती किया गया था। 1 जून, 1992 को जब याचिकाकर्ता अपनी यूनिट के अन्य सदस्यों के साथ व्यायाम पर गया था और जब वह एक पेड़ की

छाया के नीचे आराम कर रहा था, तो उसकी राइफल गलती से डिस्चार्ज हो गई। राइफल के डिस्चार्ज से उनकी यूनिट के सिपाही इकबाल सिंह घायल हो गए। याचिकाकर्ता के खिलाफ किसी भी दुर्भावना का कोई आरोप नहीं था। इस चूक के लिए, याचिकाकर्ता पर संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा अधिनियम की धारा 63 के तहत किए गए अपराध के लिए मुकद्दमा चलाया गया था और उसे अच्छी व्यवस्था और सैन्य अनुशासन के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण चूक करने के लिए उक्त धारा के तहत आरोप-पत्र दायर किया गया था, जिसमें उसने 1 जून, 1992 को लगभग 1200 बजे फील्ड में अपनी राइफल को इतनी लापरवाही से संभाला कि उसे छोड़ दिया गया और इस तरह सिपाही इकबाल सिंह घायल हो गया। 13 जुलाई, 1992 को कार्यवाहक कमांडिंग ऑफिसर द्वारा संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही की गई, जिसमें याचिकाकर्ता ने अपना दोष स्वीकार कर लिया और उसे सेवा से बर्खास्त करने की सज़ा सुनाई गई। दोषी होने से पहले, याचिकाकर्ता को उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों की प्रकृति के बारे में विधिवत रूप से समझाया गया था। अपने खिलाफ आरोपों की सामग्री और आरोपों को जानकर, उन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

(3) याचिकाकर्ता ने याचिका में दलील दी कि उनके बार-बार अनुरोध के बावजूद सेना के अधिकारियों द्वारा कोर्ट मार्शल कार्यवाही की प्रति उन्हें प्रदान नहीं की गई थी। इसलिए, उन्हें 1993 के सीडब्ल्यूपी संख्या 3546 को दायर करके इस न्यायालय को अवगत कराना पड़ा। इसके बाद, उन्हें 27 अगस्त, 1993 को संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही की प्रति प्रदान की गई। इसके बाद याचिकाकर्ता ने 18 अक्टूबर, 1993 को अधिनियम की धारा 164 (2) के प्रावधानों के तहत एक वैधानिक पोस्ट-कन्फर्मेशन याचिका दायर की, लेकिन उनके द्वारा दायर उक्त याचिका पर संबंधित प्राधिकारी द्वारा बार-बार याद दिलाने के बावजूद निर्णय नहीं लिया गया। उन्हें 1994 के सीडब्ल्यूपी संख्या 6152 दायर करके फिर से इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ा, जिसे 13 मई, 1994 को प्रतिवादी नंबर 2 को निर्देश देने के साथ निपटा दिया गया कि वह दो महीने की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता की पोस्ट पुष्टिकरण की याचिका पर विचार करे और फैसला करे। जब उपरोक्त निर्धारित समय में याचिकाकर्ता की पोस्ट पुष्टिकरण याचिका पर फैसला नहीं किया गया, तो याचिकाकर्ता ने 1994 के सी.ओ.सी.पी. नंबर 1282

दायर किया। इसके बाद, प्रतिवादी संख्या 2 ने 2 मार्च, 1995 को आदेश पारित किया, जिसके तहत याचिकाकर्ता की पोस्ट पुष्टिकरण याचिका पर फैसला किया गया और सेवा से बर्खास्तगी की सज़ा को माफ कर दिया गया। हालांकि, यह आगे निर्देश दिया गया था कि याचिकाकर्ता को उसकी बर्खास्तगी प्रभावी होने की तारीख से सेवा से मुक्त माना जाएगा। 2 मार्च, 1995 का यह आदेश (अनुलग्नक पी-4) याचिकाकर्ता को 14 मार्च, 1995 को गांव नांगल पथ, पीओ महरोली, ज़िला अंबाला (हरियाणा) में अपने स्थायी निवास पर प्राप्त हुआ था। चूंकि उक्त आदेश अंबाला जिले के एक गांव में अपने आवासीय पते पर याचिकाकर्ता को बताया गया था, इसलिए याचिकाकर्ता ने उक्त आदेश को चुनौती देते हुए इस न्यायालय में वर्तमान रिट याचिका दायर की, जिसमें आरोप लगाया गया कि कार्रवाई का कारण इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के तहत उत्पन्न हुआ है।

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 11

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

(4) याचिकाकर्ता ने अपने खिलाफ आयोजित संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही को चुनौती दी है। 13 जुलाई, 1992 (अनुलग्नक पी-2) और प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित दिनांक 2 मार्च, 1995 का आदेश (अनुलग्नक पी-4), जिसके तहत उनकी बर्खास्तगी के आदेश को विभिन्न आधारों पर आरोपमुक्त करने में परिवर्तित कर दिया गया था, यह आरोप लगाते हुए कि ये पूरी तरह से अवैध और अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं।

(5) इस न्यायालय द्वारा जारी नोटिस के अनुसरण में, प्रतिवादियों ने लिखित बयान दायर किया है, जिसमें योग्यता के साथ-साथ प्रारंभिक आपत्तियों पर याचिका का विरोध किया गया है कि इस न्यायालय के पास इस याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है, क्योंकि न तो कथित घटना हुई थी और न ही इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में आक्षेपित आदेश पारित किए गए थे। केवल इसलिए कि प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा याचिकाकर्ता की पोस्ट-पुष्टि याचिका का निपटारा करते हुए पारित आदेश इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में याचिकाकर्ता को बताया गया था, यह याचिकाकर्ता को इस न्यायालय के असाधारण अधिकार क्षेत्र को लागू करने का अधिकार नहीं देता है।

(6) प्रस्ताव स्तर पर दोनों पक्षों को सुनने के बाद, रिट याचिका को 10 मई, 1996 को एक खंडपीठ द्वारा सुनवाई के लिए स्वीकार कर लिया गया था। अब मामले को नियमित सुनवाई के लिए इस पीठ के समक्ष रखा गया है।

(7) हमने दोनों पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना है और मामले के रिकॉर्ड का अवलोकन किया है।

(8) भारत संघ की ओर से केन्द्र सरकार के वरिष्ठ स्थायी अधिवक्ता श्री आर.एस. राय ने 2002 के सीडब्ल्यूपी सं. 6557 में इस न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा करते हुए 20 दिसम्बर, 2002 को एस. बी. तरलोक बनाम भारत संघ और अन्य शीर्षक से निर्णय लिया और प्रारंभिक आपत्ति जताई कि इस न्यायालय के पास याचिकाकर्ता द्वारा दायर वर्तमान याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है क्योंकि न तो कथित घटना हुई थी और न ही यह हुआ था। संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में आयोजित की गई थी। उन्होंने आगे कहा कि यहां तक कि 2 मार्च, 1995 का आदेश भी। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित (अनुबंध पी -4)

इस न्यायालय के क्षेत्रीय न्यायाधिकार में पारित नहीं किया गया था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि केवल इसलिए कि उक्त आदेश याचिकाकर्ता को इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में स्थित गांव में उसके स्थायी पते पर सूचित किया गया था, याचिकाकर्ता को इस न्यायालय से विवाद को निर्धारित करने का कोई अधिकार नहीं देता है। एस. बी. तरलोक (पूर्व) के मामले में, इस न्यायालय द्वारा यह माना गया है कि केवल इसलिए कि आक्षेपित आदेश इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में सूचित किया गया है, यह इस न्यायालय को पक्षों के बीच विवाद पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं करेगा, जब कार्रवाई का कारण इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में उत्पन्न नहीं होता है।

(9) दूसरी ओर, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी इस स्तर पर क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के बारे में यह आपत्ति नहीं उठा सकते हैं, जब मामले को अंतिम सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि एक बार जब मामले को वर्ष 1996 में नियमित सुनवाई के लिए स्वीकार किया गया था, तो अब याचिकाकर्ता

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 14

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

द्वारा दायर रिट याचिका को अधिकार क्षेत्र की कमी के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि इसी तरह की परिस्थितियों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनेश चंद्र गहतोड़ी बनाम सेना प्रमुख और एक अन्य[1] मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करते हुए, जिसके तहत क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के आधार पर रिट याचिका को प्रस्ताव स्तर पर खारिज कर दिया गया था, निम्नानुसार माना है: -

"रिट याचिका 1992 में दायर की गई थी। विवादित आदेश 1999 में पारित किया गया था। यह एक तथ्य है कि उच्च न्यायालय को इस पर विचार करना चाहिए था। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए था कि सेनाध्यक्ष पर देश में कहीं भी मुकद्दमा चलाया जा सकता है। केवल कार्रवाई के कारण पर भरोसा करना, जैसा कि उच्च न्यायालय ने किया, उचित नहीं था। अपील के तहत आदेश को रद्द किया जाता है। रिट याचिका (1992 की सीडब्ल्यूपी संख्या 39209) को उच्च न्यायालय की

---

[1] **(2001) 9 एससीसी 525)**

फाइल में बहाल किया जाता है ताकि उस पर सुनवाई की जा सके और गुण-दोष के आधार पर उसका तेजी से निपटारा किया जा सके।

(10) हमने पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा दी गई प्रस्तुतियों पर विचार किया है। हमारे विचार में, क्षेत्रीय अधिकार-क्षेत्र के बिंदु पर इस स्तर पर याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज करना उचित नहीं होगा। दिनेश चंद्र गहतोड़ी के मामले (पूर्व) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर पूरी तरह से लागू होता है और उक्त निर्णय को इस न्यायालय द्वारा एसबी तरलोक के मामले (पूर्व) में प्रतिष्ठित किया गया है, जबकि यह मानते हुए कि चूंकि मामला सात वर्षों तक लंबित रहा, इसलिए, मामले के अजीब तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्चतम न्यायालय ने उक्त दृष्टिकोण अपनाया। लेकिन एसबी तरलोक के मामले (पूर्व) में उक्त निर्णय का पालन नहीं किया गया, क्योंकि मामले में, प्रारंभिक चरण में प्रारंभिक आपत्ति उठाई गई थी। इसलिए, हमें वर्तमान याचिका की विचारणीयता के

बारे में उत्तरदाताओं के विद्वान वकील द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति में कोई बल नहीं मिलता है।

(11) गुण-दोष के आधार पर, सबसे पहले याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आरोप-पत्र (अनुबंध पी -1) में लगाए गए आरोपों से किसी भी गैर-इरादतन उपेक्षा का पता नहीं चलता है। अपराध की प्रकृति और आरोप के विवरण से स्पष्ट रूप से पता चलेगा कि यह दुर्घटनावश राइफल के डिस्चार्ज होने का मामला था। अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत भी दुर्घटना अथवा आकस्मिक चूक/चूक पूर्ण बचाव है। इसलिए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि आरोप के विवरण में निहित आरोप किसी भी अपराध को प्रकट नहीं करते हैं और इस तरह इस आरोप पर याचिकाकर्ता की कोई दोष-सिद्धि दर्ज नहीं की जा सकती थी और कोई सज़ा नहीं दी जा सकती थी। इसलिए, संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही में याचिकाकर्ता को दी गई सेवा से बर्खास्तगी की सज़ा पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 17

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

(12) हमने याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा की गई इस दलील पर विचार किया है। हमारे विचार में, विद्वान वकील द्वारा उठाए गए विवाद में कोई बल नहीं है और इसे अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए। यह स्वीकार किया गया तथ्य है कि याचिकाकर्ता की राइफल से गोली चलने के कारण एक व्यक्ति घायल हो गया था। याचिकाकर्ता ने अधिकारियों के समक्ष अपना अपराध भी स्वीकार कर लिया। उनके खिलाफ संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही शुरु की गई और उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। यद्यपि कोर्ट मार्शल की कार्यवाही संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक समीक्षा के अधीन है, फिर भी कोर्ट मार्शल संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय के अधीक्षण के अधीन नहीं है। यदि कोर्ट मार्शल उचित ढंग से आयोजित किया गया है और इसकी संरचना को कोई चुनौती नहीं दी गई है और कार्यवाही निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार है, तो उच्च न्यायालय अपराधी को दी गई सज़ा में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। यह भी अच्छी तरह से तय है कि कोर्ट मार्शल की कार्यवाही की तुलना दंड प्रक्रिया संहिता के तहत आपराधिक अदालत में कार्यवाही के साथ नहीं की जानी चाहिए। वर्तमान याचिका में, याचिकाकर्ता ने कोर्ट मार्शल

कार्यवाही के संचालन में किसी भी अनियमितता का आरोप नहीं लगाया। एक बार जब उन्होंने कोर्ट मार्शल की कार्यवाही में अपनी दलीलें दीं, तो बाद में वह कोर्ट मार्शल द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं करने के संबंध में आपत्ति नहीं उठा सकते। इसलिए, यह नहीं माना जा सकता है कि आरोप के विवरण में निहित आरोप किसी भी अपराध को प्रकट नहीं करते हैं। उनके अनुसार, अधिनियम की धारा 63 किसी कार्य या चूक को दंडित करती है, जिसे अधिनियम के तहत अपराध के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया है, लेकिन फिर भी इसे चूक का कार्य माना जाता है जो अच्छे आदेश और सैन्य अनुशासन के लिए हानिकारक है। याचिकाकर्ता ने अपने हाथ की लापरवाही से संभालने के अपने कृत्य से अपने सह-साथी को घायल कर दिया है, जो स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 63 के तहत आता है। हालांकि याचिकाकर्ता की कथित चूक जानबूझकर नहीं की गई हो सकती है, लेकिन यह लापरवाही पूर्ण चूक है क्योंकि एक सैनिक से उच्च स्तर की देखभाल की मांग की जाती है, जो आग्नेयास्त्रों को संभाल रहा है, जिसे इस तरह के आग्नेयास्त्रों के उचित संचालन में प्रशिक्षित किया गया है।

अधिनियम की धारा 71 के तहत, बर्खास्तगी उन सजाओं में से एक है जो कोर्ट-मार्शल द्वारा दोषी ठहराए गए अधिकारी को दी जा सकती है।

(13) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने तब प्रस्तुत किया कि भले ही तर्कों के लिए यह मान लिया जाए कि आरोप प्रथम दृष्टया अपराध का गठन करते हैं, तो निश्चित रूप से ये आरोप अधिनियम की धारा 63 के तहत किसी भी अपराध को प्रकट नहीं करते हैं, क्योंकि यह उक्त धारा के चार कोनों के भीतर नहीं आता है। उनके अनुसार, अधिनियम की धारा 63 एक कार्य या चूक को दंडित करती है, जिसे अधिनियम के तहत अपराध के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया है, लेकिन फिर भी इसे चूक का कार्य माना जाता है जो अच्छे आदेश और सैन्य अनुशासन के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण है। उनके अनुसार, अधिनियम की धारा 63 के तहत किसी व्यक्ति पर आरोप लगाने से पहले, अधिकारियों को पहले यह देखना आवश्यक है कि क्या अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान में कार्य या चूक को अपराध माना जाता है, उसके बाद ही अधिनियम की धारा 63 का सहारा लिया जा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि अधिनियम की धारा 69 के अवलोकन से पता चलता

है कि कानून की कल्पना से, यह धारा भारतीय दंड संहिता (इसके बाद संहिता के रूप में संदर्भित) के तहत सभी अपराधों को अधिनियम के तहत अपराध बनाती है और इस तरह कोर्ट मार्शल द्वारा सुनवाई योग्य है। इसके बाद उन्होंने प्रस्तुत किया कि आरोप-पत्र (अनुबंध पी -1) में किए गए कथनों को पढ़ने से पता चलेगा कि याचिकाकर्ता का कथित कार्य / चूक तेज या लापरवाही पूर्ण कार्य था, जिसके परिणामस्वरूप चोट लगी है, इस तरह के कार्य को स्पष्ट रूप से संहिता की धारा 337/338 के तहत बनाए गए अपराधों के चार कोनों के भीतर लाया जाता है। चूंकि संहिता के तहत सभी अपराध अधिनियम के तहत अपराध हैं, कानून की कल्पना द्वारा, जैसा कि अधिनियम की धारा 69 द्वारा बनाया गया है, याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप एक नागरिक अपराध के समान हैं, जैसा कि अधिनियम की धारा 69 के तहत दंडनीय है। यदि ऐसा है, तो ऐसे अपराध के परीक्षण के लिए कोई संक्षिप्त कोर्ट-मार्शल का मुकद्दमा नहीं चलाया जा सकता है जब तक कि अधिनियम की धारा 120 की उप-धारा (2) के प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया गया हो। इस उप-धारा में प्रावधान है कि अधिनियम की धारा 69 के तहत दंडनीय अपराध की सुनवाई संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा

उस अधिकारी द्वारा किए गए संदर्भ के बिना नहीं की जा सकती है, जिसे ज़िला कोर्ट मार्शल बुलाने का अधिकार है। चूंकि वर्तमान मामले में, सक्षम प्राधिकारी द्वारा ऐसा कोई संदर्भ नहीं दिया गया था और न ही कोई मंजूरी प्राप्त की गई थी, जैसा कि अधिनियम की धारा 120 की उप-धारा (2) के तहत आवश्यक है, इसलिए, वर्तमान मामले में की गई संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

(14) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के उपरोक्त तर्क हालांकि रोचक प्रतीत होते हैं लेकिन इसमें कोई बल नहीं है। यदि हम आरोप पत्र (अनुलग्नक पी -1) का सावधानीपूर्वक अवलोकन करते हैं, तो यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता पर किसी भी नागरिक अपराध के लिए आरोप नहीं लगाया गया था, जैसा कि संहिता के तहत परिभाषित किया गया था, दूसरी ओर, याचिकाकर्ता पर अच्छे आदेश और सैन्य अनुशासनहीनता के लिए एक चूक के लिए मुकद्दमा चलाया गया था क्योंकि वह अपनी सर्विस राइफल को सावधानी से नहीं संभाल सकता था, जिसके लिए उसे इस तरह के फायर-आर्म को संभालने की उम्मीद थी, जिसके लिए उसे विधिवत प्रशिक्षित

किया गया था। याचिकाकर्ता की ओर से इस तरह का कृत्य स्पष्ट रूप से उपेक्षा और चूक के बराबर है, हालांकि जानबूझकर या दोषी नहीं हो सकता है। ऐसा कृत्य दीवानी अपराध नहीं है और यह केवल अधिनियम की धारा 63 के तहत ही मान्य है। याचिकाकर्ता के वकील की यह दलील कि आरोप पत्र में लगाए गए आरोप संहिता की धारा 336/337/338 के तहत अपराध हैं, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। उपर्युक्त धाराओं में किसी व्यक्ति को उसके लापरवाह कार्य के लिए दंडित करने का प्रावधान है जो मानव जीवन या अन्यों की व्यक्तिगत सुरक्षा को खतरे में डालता है। लेकिन, आरोप-पत्र (अनुबंध पी -1) में आरोप मानव जीवन और व्यक्तिगत सुरक्षा को खतरे में डालने के लिए याचिकाकर्ता की ओर से लापरवाही भरा कार्य नहीं है। याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप हैं कि उसने अपनी सर्विस राइफल को इतनी लापरवाही से संभालते हुए अच्छे आदेश और सैन्य अनुशासनहीनता के प्रति पूर्वाग्रह पैदा किया कि उसे छुट्टी दे दी गई और इस तरह उसके सह-साथी को चोट लगी। इसलिए, किसी भी तरह से, चार्जशीट में याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को संहिता के तहत परिभाषित और दंडनीय नागरिक अपराध नहीं माना जा सकता है। इसलिए धारा के

तहत याचिकाकर्ता पर मुकद्दमा चलाने का सवाल ही उठता है। अधिनियम की धारा 69 नहीं उठती है और अधिनियम की धारा 63 के तहत उन पर सही मुकद्दमा चलाया गया था। यदि ऐसा है, तो अधिनियम की धारा 120 की उप-धारा (2) द्वारा लगाई गई रोक लागू नहीं होती है। इसलिए, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की इस दलील में कोई बल नहीं है कि वर्तमान मामले में की गई संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर थी।

(15) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने आगे कहा कि, - 2 मार्च, 1995 के आदेश (अनुलग्नक पी-4) के तहत, अधिनियम की धारा 162 के तहत सेना प्रमुख की प्रत्यायोजित शक्तियों का प्रयोग करते हुए, उप सेना प्रमुख, अधिनियम की धारा 164(2) के तहत दायर याचिकाकर्ता की पोस्टपुष्टिकरण याचिका का निपटारा करते हुए संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई बर्खास्तगी की सज़ा को माफ कर दिया, लेकिन निर्देश दिया कि याचिकाकर्ता को उस तिथि से सेवा से मुक्त माना जाएगा उनका बर्खास्तगी आदेश प्रभावी हो गया । उन्होंने प्रस्तुत किया कि सेना के उप प्रमुख

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 24

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

अधिनियम की धारा 162 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए सज़ा को कम करने के लिए सक्षम थे, लेकिन ऐसा करते समय वह सज़ा को किसी अन्य सज़ा तक कम कर सकते हैं जो अधिनियम के तहत संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा पारित किया जा सकता है। लेकिन आरोपमुक्त करने की सज़ा किसी भी सज़ा के अंतर्गत नहीं आती है जिसे अदालत द्वारा दिया जा सकता है। उन्होंने अधिनियम की धारा 71 का उल्लेख किया जिसमें अदालत द्वारा दी जाने वाली सज़ा का प्रावधान है। उस धारा में आरोपमुक्त किए जाने की सज़ा का उल्लेख नहीं है। इस प्रकार, आरोपमुक्त करना अधिनियम के तहत निर्धारित दंडों में से एक नहीं है जिसे अदालत मजिस्ट्रेट पारित कर सकता है। याचिकाकर्ता के वकील के अनुसार, डिस्चार्ज का मतलब समय से पहले सेवानिवृत्ति है और यहां तक कि समय से पहले सेवानिवृत्ति या सेवा से रिहाई की सज़ा को अधिनियम की धारा 71 के प्रावधानों के तहत कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा के रूप में निर्धारित नहीं किया गया है। उनके अनुसार, उप सेना प्रमुख द्वारा बर्खास्तगी की सज़ा में छूट के बाद, याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई सज़ा नहीं है और उसे सेवा में माना जाता है और निर्वहन का आदेश पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है। इसलिए, याचिकाकर्ता को

सभी परिणामी लाभों के साथ बहाल किया जाना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि अधिनियम की धारा 179 के प्रावधानों को पढ़ने से भी यही निष्कर्ष निकलेगा, जिससे उस प्रावधानों के तहत भी, सक्षम प्राधिकारी किसी भी अपराध के कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा को उस अधिनियम में उल्लिखित सज़ा या कम सज़ा में बदल सकता है। चूंकि अधिनियम में सज़ा के रूप में निर्वहन का उल्लेख नहीं किया गया है, इसलिए इसे बर्खास्तगी से अलग नहीं किया जा सकता है।

(16) उपरोक्त तर्क के जवाब में, प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि 2 मार्च, 1995 का आदेश (अनुबंध पी -4) उप-सेना प्रमुख द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर पोस्ट पुष्टिकरण की याचिका का निपटारा करते हुए संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा याचिकाकर्ता को दिए गए निष्कर्ष और सज़ा के खिलाफ पारित किया गया था। सेना प्रमुख की शक्तियों का प्रयोग करते हुए उप-सेना प्रमुख ने बर्खास्तगी की सज़ा को पूरी तरह से मानवीय आधार पर निर्वहन करने के लिए कम कर दिया था। 'बर्खास्तगी' की सज़ा को 'आरोपमुक्त' करके संक्षेप न्यायालय के फैसले

को कम करना याचिकाकर्ता द्वारा किए गए अपराध को रद्द नहीं करता है और अपराध का संज्ञान समान रहता है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि अधिनियम की धारा 164 की उप-धारा (2) के तहत, केंद्र सरकार या सक्षम प्राधिकारी किसी भी कोर्ट मार्शल की कार्यवाही के खिलाफ पीड़ित व्यक्ति द्वारा दायर पोस्ट पुष्टिकरण याचिका पर फैसला करते समय ऐसी सज़ा की पुष्टि कर सकते हैं या उस पर ऐसा आदेश पारित कर सकते हैं जो वह उचित समझे। इसलिए, सेना के उप प्रमुख ने दिनांक 2 मार्च, 1995 (अनुलग्नक पी-4) के विवादित आदेश को पारित करते हुए अपने विवेक से याचिकाकर्ता की सज़ा को बर्खास्तगी से घटाकर आरोपमुक्त कर दिया, जो वह अधिनियम की धारा 164 की उप-धारा (2) के तहत ऐसा करने के लिए सक्षम था। अपनी दलील के समर्थन में प्रतिवादियों के वकील ने आर.एन. श्रीवास्तव मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले पर भरोसा किया। श्रीवास्तव बनाम भारत संघ और अन्य[2] जिसमें यह कहा गया था कि केंद्र सरकार या सक्षम प्राधिकारी अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत दायर पोस्ट पुष्टिकरण याचिका पर आदेश पारित करते समय सेवा से निर्वहन के

[2] 1982 (3) एस एल आर 133

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 27

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

आदेश को कम सज़ा के रूप में बर्खास्तगी के आदेश को संशोधित करने के लिए सक्षम है। हमारे विचार में, प्रतिवादियों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्क में बल है। यद्यपि अधिनियम की धारा 71 के तहत प्रदान की गई संक्षेप कोर्ट मार्शल कार्यवाही में दी जा सकने वाली सज़ाओं की सूची में आरोपमुक्त करने की सज़ा का उल्लेख नहीं है, लेकिन उक्त सज़ा केंद्र सरकार या प्रतियोगी प्राधिकरण द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत पोस्ट पुष्टिकरण याचिका का निपटारा करते समय दी जा सकती है। जैसा कि इस धारा के तहत कोई भी आदेश प्राधिकारी द्वारा पारित किया जा सकता है जो वह उचित समझता है। हम आर.एन श्रीवास्तव के मामले (पूर्व) में दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा निर्धारित कानून से सहमत हैं कि सेवा से निर्वहन की सज़ा सेवा से बर्खास्तगी की सज़ा से कम सज़ा है और इसे केंद्र सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत आदेश पारित करते समय दिया जा सकता है।

(17) इस स्थिति का सामना करते हुए, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने यह समझाने की कोशिश की कि कोई भी पोस्ट पुष्टिकरण याचिका संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा पारित आदेश के खिलाफ नहीं है। उनके अनुसार, पोस्ट पुष्टिकरण याचिका केवल उन कोर्ट मार्शल कार्यवाही के आदेश के खिलाफ दायर की जा सकती है जिन्हें उच्च प्राधिकारी द्वारा पुष्टि की जानी आवश्यक है; और ऐसी याचिका ऐसे कोर्ट मार्शल की सज़ा के खिलाफ दायर की जा सकती है, जिसकी कार्यवाही की पुष्टि की गई थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा की पुष्टि करने की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि अधिनियम की धारा 161 से स्पष्ट है, जिसमें प्रावधान है कि संक्षेप कोर्ट मार्शल के निष्कर्ष और सज़ा की पुष्टि करने की आवश्यकता नहीं होगी, लेकिन इसे तुरंत किया जा सकता है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि 2 मार्च, 1995 का आदेश (अनुलग्नक पी -4) अधिनियम की धारा 162 के तहत सेना के उप-प्रमुख द्वारा पारित किया गया है, हालांकि यह गलत तरीके से कहा गया है कि उक्त आदेश उक्त प्राधिकरण द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) (1982 (3) एसएलआर 133) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर पोस्ट पुष्टिकरण याचिका का निपटारा करते हुए पारित किया गया था। याचिकाकर्ता के

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 29

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

वकील ने कहा कि अधिनियम की धारा 162 के तहत, सेना के उप-प्रमुख या सेना प्रमुख द्वारा इस संबंध में अधिकार प्राप्त कोई भी अधिकारी निश्चित रूप से सज़ा को कम कर सकता है, लेकिन वह उस सज़ा को किसी अन्य सज़ा तक कम कर सकता है जिसे अदालत ने अधिनियम के तहत पारित किया हो। उन्होंने कहा कि यह अभिव्यक्ति इस तरह के आदेश को पारित कर सकती है क्योंकि वह समझता है कि अधिनियम की धारा 164 (2) में उपयोग किया गया है, अधिनियम की धारा 162 के तहत उपयोग नहीं किया गया है। इसलिए, सक्षम प्राधिकारी के पास बर्खास्तगी की सज़ा को सेवा से निर्वहन तक कम करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, क्योंकि सेवा से निर्वहन की सज़ा को अधिनियम के तहत दी जाने वाली सज़ाओं में से एक के रूप में निर्धारित नहीं किया गया है, जैसा कि अधिनियम की धारा 71 में परिभाषित किया गया है। इसलिए, सेना के उप-प्रमुख द्वारा पारित दिनांक 2 मार्च, 1995 का आदेश (अनुलग्नक पी-4) पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

(18) हम याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए उपरोक्त विवाद को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। अधिनियम की धारा 164 में निम्नानुसार प्रावधान है -

"164. कोर्ट-मार्शल के आदेश, निष्कर्ष या सज़ा के विरुद्ध उपाय - (1) इस अधिनियम के अधीन कोई भी व्यक्ति जो किसी कोर्ट-मार्शल द्वारा पारित किसी भी आदेश से खुद को व्यथित समझता है, ऐसे कोर्ट-मार्शल के किसी भी निष्कर्ष या सज़ा की पुष्टि करने के लिए अधिकृत अधिकारी या प्राधिकारी के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत कर सकता है, और पुष्टि करने वाला प्राधिकारी ऐसे कदम उठा सकता है जो शुद्धता के बारे में खुद को संतुष्ट करने के लिए आवश्यक समझे जाएं। पारित आदेश की वैधता या औचित्य या किसी भी कार्यवाही की नियमितता के रूप में जिससे आदेश संबंधित है।

(2) इस अधिनियम के अधीन कोई भी व्यक्ति जो किसी ऐसे निष्कर्ष या सज़ा से व्यथित समझता है जिसकी पुष्टि की जा चुकी है, वह केन्द्रीय सरकार, (सेना प्रमुख) या ऐसे

निष्कर्ष या सज़ा की पुष्टि करने वाले से वरिष्ठ किसी निर्धारित अधिकारी और केन्द्रीय सरकार (सेना प्रमुख) या अन्य अधिकारी, के समक्ष याचिका प्रस्तुत कर सकेगा। जैसा भी मामला हो, उस पर ऐसा आदेश पारित कर सकते हैं जो वह उचित समझे।

(19) उपर्युक्त धारा को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस धारा के दो स्वतंत्र भाग हैं। उपधारा (1) में एक याचिका दायर करने का प्रावधान है जो पीड़ित व्यक्ति द्वारा किसी भी कोर्ट मार्शल द्वारा ऐसे कोर्ट मार्शल के निष्कर्ष या सज़ा की पुष्टि करने के लिए अधिकार प्राप्त अधिकारी या प्राधिकारी को पारित किसी भी आदेश के खिलाफ दायर की जा सकती है। पुष्टि करने वाला प्राधिकारी उक्त याचिका पर विचार कर सकता है और ऐसे कदम उठा सकता है जो ऐसे कोर्ट मार्शल द्वारा पारित आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के लिए आवश्यक समझा जा सकता है। उप-धारा (2) में एक पोस्ट पुष्टिकरण याचिका का प्रावधान है जिसे केंद्र सरकार या सेना प्रमुख या कमांड में किसी भी निर्धारित अधिकारी के समक्ष दायर किया जा सकता है, जिसने उक्त आदेश की शुद्धता और

वैधता को चुनौती देने वाले ऐसे निष्कर्ष या सज़ा की पुष्टि की है। यद्यपि संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही की पुष्टि करने की आवश्यकता नहीं है जैसा कि अधिनियम की धारा 161 के तहत प्रावधान किया गया है, लेकिन अधिनियम की धारा 162 के अनुसार, प्रत्येक संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही को बिना किसी देरी के उस डिवीजन या ब्रिगेड को कमांड करने वाले अधिकारी को अग्रेषित करना आवश्यक है जिसके भीतर परीक्षण आयोजित किया गया था या निर्धारित अधिकारी को बिना किसी देरी के अग्रेषित किया जा सकता है और ऐसा अधिकारी सज़ा को किसी अन्य सज़ा तक कम कर सकता है। इस प्रकार, संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा की पुष्टि धारा 162 के तहत ही निहित है। वर्तमान मामले में, संक्षेप कोर्ट मार्शल की कार्यवाही ब्रिगेड कमांडर को अग्रेषित की गई थी, जिसने 5 अगस्त, 1992 को उस पर प्रतिहस्ताक्षर किए और संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा की पुष्टि की। अधिनियम की धारा 164 की उप-धारा (2) में एक स्वतंत्र भाग है जिसमें यह प्रावधान है कि 'किसी भी कोर्ट मार्शल' द्वारा उसे दी गई सज़ा के निष्कर्ष के खिलाफ कोई भी पीड़ित व्यक्ति केंद्र सरकार या चीफ ऑफ आर्मी स्टाफ या कमांड में किसी भी निर्धारित अधिकारी के समक्ष याचिका दायर

कर सकता है। यह उप-धारा संक्षेप कोर्ट मार्शल के निष्कर्ष और सज़ा के खिलाफ पीड़ित व्यक्ति को उच्च प्राधिकारी के समक्ष याचिका दायर करने की अनुमति भी देती है। इस व्याख्या को नियमों में से नियम 201 से समर्थन मिलता है, जो निम्नानुसार प्रावधान करता है -

"201. धारा 164 (2) के तहत निर्धारित अधिकारी -

धारा 164 की उप-धारा (2) के प्रयोजनों के लिए निर्धारित अधिकारी कमांडिंग अधिकारी से कमांड में कोई भी अधिकारी बेहतर होगा और संक्षेप कोर्ट-मार्शल के मामले में कोई भी अधिकारी कमांड में उस अधिकारी से बेहतर होगा जिसने संक्षेप कोर्ट-मार्शल किया था, बशर्ते कि ऐसे वरिष्ठ अधिकारी के पास ब्रिगेड कमांडर से कम शक्ति न हो।

(20) इस नियम से, यह स्पष्ट है कि संक्षेप कोर्ट मार्शल के मामले में, अधिकारी से कमांड में कोई भी अधिकारी, जिसने संक्षेप कोर्ट मार्शल रखा था, वह निर्धारित अधिकारी है जिसके समक्ष अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत याचिका दायर की जा सकती है।

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 34

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

यह मामले का एक पहलू है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने खुद संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा उसे सुनाई गई सज़ा के खिलाफ अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत पोस्ट पुष्टिकरण याचिका दायर की। इतना ही नहीं, जब उक्त याचिका पर निर्णय नहीं लिया गया, तो उन्होंने 1994 की सीडब्ल्यूपी संख्या 6152 दायर की, जिसे 13 मई, 1994 को प्रतिवादी नंबर 2 को निर्देश देने के साथ निपटा दिया गया कि वह दो महीने की अवधि के भीतर अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर याचिका पर विचार करें और फैसला करें। अब, संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा के खिलाफ अधिनियम की धारा 164 की उप-धारा (2) के तहत याचिका सुनवाई योग्य है और उप-सेना प्रमुख द्वारा पारित 2 मार्च, 1995 (अनुबंध पी -4) का आदेश पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर है। हमारा सुविचारित मत है कि संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई खोज और सज़ा के विरुद्ध पीड़ित व्यक्ति द्वारा अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत एक याचिका विचारणीय है और उस पर निर्धारित प्राधिकारी द्वारा ऐसा आदेश पारित करके विचार और निर्णय लिया जा सकता है जो वह उचित समझता है। ऐसा आदेश पारित करते समय संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा दी गई सज़ा को कम किया जा सकता है और किसी

अन्य सज़ा में तब्दील किया जा सकता है। हमारी यह भी राय है कि अधिनियम की धारा 184 (2) के तहत सक्षम प्राधिकारी बर्खास्तगी की सज़ा को सेवा से निर्वहन तक कम सज़ा के रूप में कम कर सकता है। इस प्रकार, सेना उप-प्रमुख द्वारा पारित दिनांक 2 मार्च, 1995 (अनुलग्नक पी-4) के आक्षेपित आदेश में कोई खामी या अवैधता नहीं है।

(21) अंत में, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि भले ही यह माना जाता है कि सेवा से बर्खास्तगी की सज़ा को सेवा से निर्वहन के आदेश तक कम किया जा सकता है, लेकिन याचिकाकर्ता को पूर्वव्यापी प्रभाव से यह नहीं दिया जा सकता है। दिनांक 2 मार्च, 1995 के आक्षेपित आदेश (अनुलग्नक पी-4) में, आरोपमुक्त करने की सज़ा को बर्खास्तगी आदेश के प्रभावी होने की तारीख से प्रभावी माना जाएगा। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त आदेश 2 मार्च, 1995 को पारित किया गया था, लेकिन इसे 13 जुलाई, 1992 से लागू किया गया था। इसलिए, पूर्वव्यापी प्रभाव से किया गया निर्वहन का आदेश पूरी तरह से अवैध और अधिकार क्षेत्र से बाहर है। अपनी दलील के समर्थन में, उन्होंने नियमों के नियम 18 (3) के प्रावधानों का उल्लेख किया और प्रस्तुत

किया कि अन्यथा सब कुछ स्वीकार किए जाने के बावजूद आरोपमुक्त करने का आक्षेपित आदेश आदेश की तारीख यानी 2 मार्च, 1995 से प्रभावी बनाया जा सकता था और यदि ऐसा होता है, तो याचिकाकर्ता को अपनी पेंशन और पेंशन लाभ अर्जित करने का हकदार माना जाएगा।

(22) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने नियमों के नियम 13 के प्रावधानों के तहत प्रदान किए गए नोट (7) की ओर न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया था, जो कहता है कि किसी भी मामले में निर्वहन को पूर्वव्यापी नहीं बनाया जा सकता है। उपरोक्त तर्क के जवाब में, प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि नियम 13 या 18 के प्रावधान याचिकाकर्ता के मामले में लागू नहीं होते हैं क्योंकि जब याचिकाकर्ता को संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा सेवा से बर्खास्तगी के लिए दंडित किया गया था, तो वह अधिनियम के अधीन नहीं था और ये नियम केवल उन व्यक्तियों पर लागू होते हैं जो अभी भी सेवारत हैं और अधिनियम के अधीन हैं। उन्होंने आगे कहा कि अधिनियम की धारा 164 (2) के तहत आरोपमुक्त करने की सज़ा पारित करते समय और बर्खास्तगी की तारीख से

उक्त सज़ा लागू करते समय उप-सेना प्रमुख द्वारा प्रयोग किए गए विवेक अधिकार में न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

(23) हमने मामले के इस पहलू पर पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा की गई संबंधित प्रस्तुतियों पर विचार किया है और हमारी राय है कि याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के तर्क में बल है। नियमों के नियम 18 में निम्नानुसार प्रावधान है -

18.वह तारीख जिससे सेवानिवृत्ति, इस्तीफा, निष्कासन, रिहाई, आरोपमुक्त या बर्खास्तगी की सज़ा के अलावा कोर्ट मार्शल की सज़ा प्रभावी होती है -

(1) धारा 19 या अधिनियम के तहत किसी अधिकारी की बर्खास्तगी ऐसे अधिकारी की सेवानिवृत्ति, त्यागपत्र, रिहाई या निष्कासन शासकीय राजपत्र में ऐसी बर्खास्तगी, सेवानिवृत्ति या निष्कासन की अधिसूचना में उस निमित्त विनिदष्ट तिथि से प्रभावी होगा।

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 38

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

(2) अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति की बर्खास्तगी, इसके अलावा एक अधिकारी जिसकी बर्खास्तगी कोर्ट-मार्शल की सज़ा के अलावा विधिवत रूप से अधिकृत है या ऐसे व्यक्ति का आरोपमुक्त किया गया है, जिसका आरोप, यदि विधिवत रूप से अधिकृत है, तो ऐसे व्यक्ति के कमांडिंग अधिकारी द्वारा पूरी सुविधाजनक गति के साथ किया जाएगा। ऐसी बर्खास्तगी या निर्वहन को अधिकृत करने के लिए सक्षम प्राधिकारी, बर्खास्तगी या निर्वहन को अधिकृत करते समय, भविष्य में किसी भी तारीख को निर्दिष्ट कर सकता है जहां से यह प्रभावी होगा बशर्ते कि यदि ऐसी कोई तारीख निर्दिष्ट नहीं की जाती है, तो बर्खास्तगी या निर्वहन उस तारीख से प्रभावी होगा जिस पर इसे विधिवत अधिकृत किया गया था या जिस तारीख को व्यक्ति को बर्खास्त या छुट्टी दे दी गई थी, सैन्य कर्त्तव्य का पालन करना बंद कर दिया गया था, जो भी बाद की तारीख हो।

(3) अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति की सेवानिवृत्ति, निष्कासन, त्यागपत्र, रिहाई, निर्वहन या बर्खास्तगी पूर्वव्यापी नहीं होगी।

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 39

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

(24) उपर्युक्त नियम का उप-नियम (3) स्पष्ट रूप से एक प्रतिबंध लगाता है कि किसी भी मामले में पूर्वव्यापी प्रभाव से निर्वहन नहीं किया जा सकता है। पूरे नियम को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि सक्षम प्राधिकारी भविष्य की किसी भी तारीख से बर्खास्तगी या निर्वहन का आदेश दे सकता है, लेकिन किसी भी परिस्थिति में इस तरह का आदेश पूर्वव्यापी तारीख से पारित नहीं किया जा सकता है। हमारी राय है कि चाहे आरोपमुक्त सामान्य प्रक्रिया में किया गया हो या सज़ा के रूप में किया गया हो, किसी भी मामले में, इसे पूर्वव्यापी प्रभाव से नहीं किया जा सकता है। प्रतिवादी के तर्क में कोई बल नहीं है कि नियम 13 या 18 के प्रावधान याचिकाकर्ता के मामले में लागू नहीं होते हैं क्योंकि उसे संक्षेप कोर्ट मार्शल द्वारा सेवा से बर्खास्तगी के लिए दंडित किया गया था और उसके बाद वह सेवा का सदस्य नहीं रहा, और ये नियम केवल उन व्यक्तियों पर लागू होते हैं जो अभी भी सेवा में हैं और अधिनियम के अधीन हैं। कोर्ट मार्शल द्वारा दण्डित, यह नहीं कहा जा सकता है कि उपरोक्त नियम उस पर लागू नहीं होते हैं और उसे निर्वहन की सज़ा पूर्वव्यापी प्रभाव से दी जा सकती है। इसलिए, इस सीमा तक, दिनांक 2 मार्च,

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 40

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

1995 का आक्षेपित आदेश (अनुलग्नक पी-4), जिसके तहत याचिकाकर्ता को उसकी बर्खास्तगी के आदेश के प्रभावी होने की तारीख से सेवा से मुक्त माना गया था, को निरस्त किया जाता है और याचिकाकर्ता को आरोपमुक्त करने का आदेश उस तारीख से प्रभावी होगा जब इसे उप सेना प्रमुख द्वारा पारित किया गया था।

(25) उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस रिट याचिका को आंशिक रूप से लागू आदेश में पूर्वोक्त संशोधन के साथ अनुमति दी जाती है, जिस तारीख से यह प्रभावी हो गया था, जिसमें लागत के बारे में कोई आदेश नहीं था।

आर.एन.आर

इंद्रपाल सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य

(न्यायमूर्ति सतीश कुमार मित्तल) पृष्ठ 41

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा 2003 (2)

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

अंकिता महाजन

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

कैथल, हरियाणा